★ हरि ॐ तत्सत् ★



।। यतिकर्म-परिचय ।।

(मठाम्नाय सहित)

लेखक व प्रकाशक—

श्री श्री १०८ डंडी स्वामी शान्ता आश्रम जी महाराज

शान्तेश्वर मठ अस्सीघाट नं० बी० १/१५२ जे० ४

वाराणसी

तृतीय बार
५००

कार्तिक शुक्ल १२
सं० २०४४ विक्रमीय

मूल्य
दया धर्म

मठ मछली बन्दर काशी
वश परम्परा
दैनिक प्रार्थना

ॐ नारायणं पद्मभवं वषिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र परासरं च,
व्यासं शुकं गौऽपदम् महान्तं गोविन्द योगीन्द्र मथास्य शिष्यम्
श्री शंकराचार्य मथास्य पद्मपाद च हस्तामतकं च शिष्यम् ।
तं त्रोटक वार्तिकार मन्यान्नस्मद गुरु सततं मा नतोऽस्मि ।।

श्रुति स्मृति पुराणांनां मालयं वरुणालयं,
नमामि भगवद् पादं शंकर लोक शंकरम् ।
शंकरं शंकराचार्यम् केशवं वादरायणम् ,
सूत्र भाष्य कृतौ वन्दे भगवानम् पुनः; पुनः ।
ईश्वरो गुरु रात्मेति मूति भेद विभागिने,
व्योम वद् व्याप्त देहाय दक्षिणा मूर्तेय नमः ।

गुरु प्रार्थना

गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु गुरु देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ।।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्त येन चराचरम्, ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः ।
परमानन्दं परमं सुखदं केवलं ज्ञान मूर्तिम् ।।
द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्वमस्यादि लक्षणम् ।
एकम् नित्यं विमल मचलं सर्व धो साक्षिभूतम् ।
भावातीतं त्रिगुण रहितं सद् गुरु तं नमामि ।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जन शलाकया,
चक्षुरुन्मीलतं येन, तस्मै श्री गुरुवे नमः ।
कर्णधार गुरुं प्राप्तम् तद् वाक्य वलवद् धृढ़म्,
अध्यास वासनाम् त्यक्त्वा, तरन्ति भव सागरम् ।।
ध्यानमूलं गुरुर्मूर्ति पूजा मूलम् तत्पद,
मन्त्र मूलं गुरुर्वाक्य, मोक्ष मूल गुरू कृपा ।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिद पूर्णात् पूर्णमुदच्यते, ।।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

ॐ शान्तिः- ॐ शान्तिः- ॐ शान्तिः-

हरिः ॐ

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्,
तेह नाकं महिमानं सचन्त्, यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।
ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरंचि नुतः
शरण्यं, भृत्यार्ति अहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं, बन्दे महा
पुरुष ते चरणार्वृन्द ।। त्यक्तवा सुदुस्त्यजसुरेक्षित राज
लक्ष्मीं धर्मिष्ठ आर्य वचसा यद्गाद अरण्यं । माया मृगं
दयितयेऽसित् मन्वधावद बन्दे महापुरुष ते चरणार्वृन्दम।।
सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण, हे यादव, हे सखेति,
अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादत् प्रणयेन वापि ।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव,त्वमेव बन्धु श्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या च द्रविण त्वमेव, त्वमेव सर्वम् मम देव देव।।

।। नमः पारवती पतये ।।

।। ॐतत्सत् ।।

※ मठाम्नाय ※

(१) शारदा मठ

प्रथम पश्चिमाम्नायः शारदामठउच्यते ।
कीटवारः सम्प्रदायस्तस्य तीर्थाश्रमौ शुभौ ।।१।।
द्वारकाख्य हि क्षेत्रंस्यात् देवः सिद्धेश्वरस्मृतः ।
भद्रकाली तु देवोस्यादाचार्यो विष्वरुपक ।।२।।
गोमतीतीर्थममल ब्रह्मचारिश्वरुपकः ।
सामवेदस्य वक्ता च तत्र धर्म समाचरेत् ।।३।।
जीवात्मपरमात्मैक्यबोधो यत्र भविष्यति ।
तत्वमसि महावाक्यं गात्रोऽविगत उच्यते ।।४।।
सिन्धुसौवीरसौराष्ट्रामहाराष्ट्रास्तथान्तरा ।
देशाः पश्चिमदिक्स्था ये शारदामठभागिनः ।।५।।
त्रिवेणी सगमे तीर्थे तत्वमस्यादिलक्षणे ।
स्मायात्तत्वार्थभावेन तीर्थनामा स उच्यते ।।६।।
आश्रमग्रहणं प्रौढ़ आशापाशविवर्जितः ।
यातायतविनिर्मुक्त. एष. आश्रम उच्यते ।।७।।
कीटादयो विशेषेण वार्यन्ते जीवजन्तवः ।
भूतानुकम्पया नित्यं कीटचारः स उच्यते ।।८।।
स्वस्वरुपं विजानादि स्वधर्मपरिपालकः ।
स्वानन्दे क्रीडितो नित्यं स्वरूपोवटुरुच्यते ।।९।।

भावार्थ

पश्चिम प्रान्त में द्वारिका जी में शारदा मठ है। कीटवार सम्प्रदाय है। तीर्थ और आश्रम, इस मठ के संन्यासियों की उपाधियां हैं। द्वारिकाक्षेत्र है देवता सिद्धेश्वर हैं। देवी भद्रकाली हैं। आचार्य विश्वरुप हैं। गोमती तीर्थ है। ब्रह्मचारी की उपाधि स्वरूप हैं वेद सामवेद है। महावाक्य तत्वमसि है। गोत्र अविगत है। सिन्धु, सौवीर, सौराष्ट्र महाराष्ट्र तथा अन्य उनके अतर के पश्चिम दिशा के देश शारदा मठ के अधीन रखे गये।

तत्वमसि आदि लक्षणायुक्त त्रिवेणी तीर्थ संगम में तत्वार्थ भाव से जो स्नान करता है, उसको तीर्थ कहते हैं। आशा रुपी पाश से विमुक्त होकर जो संन्यास आश्रम में दृढ़ रहता है तथा यात अयात भावना से जो विमुक्त हो जाता है अर्थात आवागमन से रहित हो जाता है, उसको आश्रम कहते हैं। कीटादि जीवों की जो हिंसा नहीं करता है और सब प्राणियों पर दयादृष्टि रखता है, उसको कीटवार कहते हैं। जो अपने आत्म स्वरुप को जानता है, स्वधर्म पालन करता है, अपने आत्मानन्द में जो क्रीड़ा करता है, उसको स्वरूप कहते हैं।

(२) गोवर्धन मठ

पूर्वाम्नायों द्वितीय: स्याद्गोर्वद्धनमठः स्मृतः।
भोगवारः सम्प्रदायो बनारण्ये पदे स्मृते ॥१।
पुरुषोत्तमं तु क्षेत्रं स्याज्जगन्नाथोऽस्य देवता।

विमलाख्या हि देवीस्यादाचार्यः पद्मपादकः ॥२॥
तीर्थं महोदधि प्रोक्तं ब्रह्मचारी प्रकाशकः।
महावाक्यं च तत्र स्यात् प्रज्ञानं ब्रह्म चोच्यते ॥३॥
ऋक्वेदपठनं चैव कश्यपगोत्रमुच्यते।
अगबगकलिंगाश्च मगधोत्कलवर्ब्बराः ॥४॥
गोवर्द्धनमठाधीनः देशा प्राचीव्यवस्थिताः।
सुरम्ये निजने स्थाने वने वास करोति यः ॥५॥
प्राशाबन्धविनिर्मुक्तौ वननामास उच्यते।
अरण्ये सस्थिते नित्यमानन्दे नन्दने वने ॥६॥
त्यक्त्वा सर्वमिदं विश्वमारण्यं परिकीर्त्यते।
भोगा विषय इत्युक्तो वार्य्यंते येन जीविनाम् ।७॥
सम्प्रदायो यतीनाञ्च भोगवारः स उच्यते।
स्वयं ज्योतिर्विजानानि योगयुक्ति विशारदः ॥८॥
तत्वज्ञानप्रकाशेन तेन प्रोक्तः प्रकाशकः।

भावार्थ

पूर्वं प्रान्त में जगन्नाथजी में गोवर्धन मठ है। भोगवार सम्प्रदाय है। वन और आरण्य इस मठ के सन्यासियों की उपाधियां हैं। पुरुषोत्तम क्षेत्र है। जगन्नाथ जी देवता है। विमलाख्या देवी हैं। आचार्य पद्मपाद हैं। तीर्थ महोदधि है। ब्रह्मचारी उपाधि हैं। वेद ऋगवेद हैं। महाकाव्य 'प्रज्ञानं ब्रह्म' है। कश्यप गोत्र है।

बिहार, बंगाल, उड़ीसा, मगध आदि पूर्व दिशा के प्रान्त गोवर्द्धन मठ के अधीन रखे गये हैं।

सुन्दर निर्जन वन में वास करता है और आशा, बन्धन से जो विमुक्त रहता है, उसकी उपाधि को वन कहते हैं। जो अरण्य में रहता है और परमात्मा रुपी नन्दन वन में आनन्दित रहता है तथा समस्त संसारी भावनाओं को त्याग देता है, उसकी उपाधि को आरण्य कहते हैं। जिनके द्वारा प्राणी भोगादि विषयों से निवृत्ति प्राप्त करते हैं। यतियों के उस सम्प्रदाय को भोगवार कहते हैं । तत्वज्ञान प्रकाश के द्वारा जो स्वयमात्म ज्योति को जानता है तथा जो योग्य युक्ति विशारद है उसको प्रकाश कहते हैं।

(३) ज्योतिर्मठ

तृतीयस्तूत्तराम्नाया ज्योतिर्णाम मठोभवेत्।
श्रीमठश्चेति वा तस्य नामान्तरमुदोरतम् ॥१॥
आनन्दवार विज्ञेयः सम्प्रदायोऽस्य सिद्धिदः।
पदानि तस्य ख्यातानि गिरिपर्व्वतसागरा ॥२॥
बदरीकाश्रम क्षत्रं देवो नारायण स्मृत : ।
पूर्णागिरि च देवी स्यादाचार्य्य स्त्रोटकः स्मृतः ॥३॥
तीर्थंच्चालकनन्दाख्य ह्यानन्दो ब्रह्माचार्य्यभूत्।
अयमात्मा ब्रह्म चेति महावाक्यमुदाहृतम् ॥४॥
अथर्ववेदवक्त च भृग्वाख्यो गौत्रमुच्यते।
कुरुकाश्मीरकाम्बोजपाञ्चालदिवि भागतः ॥५॥
ज्योतिर्मठवंशा देश उदीची दिगवस्थितः ।
वासो गिरिवने नित्यं गीताध्ययनतत्परः ॥६॥

गम्भोराचलबुद्धिश्च गिरिनामा स उत्यते।
वसन् पर्व्वतमूलेषु प्रौढ़ज्ञानं बिभर्ति यः ॥७॥
सारासार विजानाति पर्वतः परिकीर्त्यते ।
तत्वसागरगम्भीरो ज्ञानरत्नपरिग्रहः ॥८॥
मर्य्यादा नैव लंघते सागरः परिकीर्त्यते ॥९॥
आनन्दोहि विलासश्च वार्य्यते येन जोविनाम्।
सम्प्रदायो यतीनां च नन्दवारः स उच्यते ॥१०॥
सत्यं ज्ञानमनन्तं यो नित्यं ध्यातेत तत्ववित्।
स्वानन्दे रमते चेव आनन्दः परिकीर्त्तितः ॥११॥

भावार्थ

उत्तर प्रान्त में बद्रीनारायण जो में ज्योर्तिमठ है। आनन्द-वार सम्प्रदाय है। गिरि, पर्वत और सागर इस मठ के सन्यासियों की उपाधियां है । क्षेत्र बदरीकाश्रम है। बद्रीनारायण देवता हैं । पूर्ण गिरि देवी हैं। आचार्य त्रोटकाचार्य हैं । तीथ अलकनन्दा है। ब्रह्मचारी की उपाधि आनन्द है। वेद अथर्वण है। महावाक्य 'अयमात्मा ब्रह्म' हैं भृग्वाख्य गोत्र है।

कुरु, काश्मीर, कम्बोज, पञ्जाल आदि उत्तर दिशा के प्रान्त ज्योर्तिमठ के अधोन हैं।

जो गिरि तथा वन में निवास करता है और नित्य गोता के अध्ययन में तत्पर रहता है, उस गम्भीर अचल बुद्धि वाले को गिरि कहते हैं। जो पर्वत की मूल पर बास करता है, जो आत्मज्ञान में प्रौढ़ है। तथा सारासार को जानता है । उसको पर्वत कहते हैं ।

जो तत्वसागर में गम्भीर है, जिसने ज्ञान रत्नों को धारण कर लिया है तथा जो मर्यादा का उल्लंघन नही करता है, उसको सागर कहते हैं जिसने प्राणियों को संसारी विलास रुपी आनन्दसे मुक्त कर दिया है, यतियों के उस सम्प्रदाय को नन्दवार कहते हैं गो तत्ववित् 'सत्यं ज्ञानमनन्तं की नित्य ध्यान करता है तथा आत्मानन्द में रमण करता है, उसको आनन्द कहते हैं।

(४) श्रृंगेरी मठ

चतुर्थो दक्षिणाम्नायः श्रृंगेरितु मठो भवेत् ।
सम्प्रदायो भूरवारो भूर्भुवो गोत्रमुच्यते ॥१॥
पदानि त्रीणि ख्यातानि सरस्वती भारती पुरो ।
रामेश्वेराह्वय क्षेत्रमादिवाराहो च देवता ॥२॥
कामाक्षी तस्य देवी स्यात् सर्व्वकामफलप्रदा।
पृथ्वीधराख्य आचार्य्यंस्तुंगभद्रेति तीर्थकम् ॥३॥
चेतन्याख्यो ब्रह्मचारी यजुर्वेदस्य पाठकः ।
अहं ब्रह्मास्मि तत्रैव महावाक्यं समीरितम् ॥४॥
आन्ध्रद्राविड़कर्णाटकेरलादिप्रभेदतः ।
श्रृंगेर्य्यधीना देशस्ते ह्यवाचिदिगवस्थितः ॥५॥
स्वरज्ञानरतो नित्यं स्वरवादी कवीश्वरः ।
संसार सागरसाहस्तास्तासो हि सरस्वती ॥६॥
विद्याभारेण सम्पूर्ण सर्वभार परित्यजन् ।
दुःख भारं न जानाति भारतो परिकीर्त्यंते ॥७॥

ज्ञानतत्वेन सम्पूर्ण पूर्णतत्वपदे स्थितः ।
पर ब्रह्मरयो नित्यं पुरीनामा स उच्यते ॥८॥
भूरीशब्देन सौवर्ण्य वार्य्यते येन जीविनाम ।
सम्प्रदायो यतीनाञ्ज भूरिवारः स उच्यते ॥९॥
चिन्मात्रं चेत्यरहित अनन्तमजरं शिवम् ।
यो जानाति सर्वं विद्वान चेतन्यं ताद्विधोयते ॥१०॥
मर्य्यादिषा सुविज्ञया चतुर्मंठविधायनी ।
तामेत्य समुयश्चित्य आचार्य्याः स्थापिता क्रमात्।११।

भावार्थ

दक्षिण प्रान्त में श्रृंगेरी में श्रृंगेरी मठ है। भूरिवार सम्प्रदाय है। सरस्वती, भारती, पुरी इस मठ के सँन्यासियों की उपाधियाँ हैं। रामेश्वर क्षेत्र है। आदि वाराह देवता हैं। देवी कामाक्षा है। तीर्थ तुंगभद्रा है। आचार्य पृथ्वीधर है। ब्रह्मचारी की उपाधि चैतन्य है। वेद यजुर्वेद है। महावाक्य 'अहम्ब्रह्मास्मि' है। भूर्भुवा गोत्र है।

आन्ध्र, द्रविड़, कर्णाटक, केरल आदि दक्षिण दिशा के प्रान्त श्रृंगेरी मठ के अधीन रखे गये है। जो स्वर ज्ञानमें निरन्तर रत रहता है, जो स्वरवाद में कवीश्वर है, संसार के सारासार को जिसने हस्तामलक कर लिया है, उसको सरस्वती कहते हैं। विद्याभार में जो पूर्ण है, अन्य सर्व भारों को जिसने त्याग दिया है तथा जो दुःख भार को नहीं जानता है, उसको भारती कहते हैं। जो ज्ञान तत्व

करके सम्पूर्ण होकर पूर्ण तत्व के पथ पद पर स्थित हैं तथा जो परब्रह्म में नित्य रत रहता है, उसको पुरी कहते हैं। भूरि शब्द करके अपने-२ वर्ण में सुरक्षित रहने के निमित्त जो प्राणियों को सुशिक्षित रखता है उस यति सम्प्रदाय को भूरिवार कहते हैं। जो चिन्मत्र, इति रहित, अनन्त, अजर, शिवजी को जानता हैं, उस विद्वान् को चैतन्य कहते हैं। पूर्वोक्त प्रकार चारों मठों की मर्यादा नियत करके उनका संचालन करने के निमित्त जगद्गुरु १००८ श्रीमत शंकराचार्य महाराज ने अपने योग्य शिष्यों को आचार्य पद पर नियत कर दिया। अभी तक इन चारों मठों का और अन्य मठों का कार्य सुचारु रुप से चल रहा है।

॥ इति मठाम्नायः ॥

—: 卐 :—

यतिकर्म–परिचय

संध्या

संध्या पदं ब्रह्मवाचकम् । जोवब्रह्मणोरेक्यं नाम संधि तत्-भवा संध्या कर्मरुपा लक्षणाया तत् कर्म अपिब्रह्मरुपमेव । अतः यतिभिः संध्या क्रियते ।

अर्थ :-जीव ब्रह्म की एकता के लिए जो कर्म प्रातः सायं किया जावे, वह कर्म भी ब्रह्मरूप हैं। इसलिए यति (संयासी) लोगों को संध्या करनो चाहिए।

भस्मधारण, आचमन, प्रणायाम

तत्रादौ भस्मधारणं आचमनं प्राणायामाः द्वादश प्रणवाभि मंत्रितम भस्मधारणं च, भस्मधारणेन देहशुद्धिः । अग्रिम कर्मणि अधिकारः

भस्मधारणम्

जलं अनेन मंत्रेण मिश्रितं कार्यं जलमितिभस्म, स्थलमितिभस्म, व्योमेतिभस्म, सर्वंॐह्वा, इदंभस्म, इस मन्त्र से भस्म में जल मिलाकर द्वादश वार प्रणवसे अभिमन्त्रित करे। द्वादश वार प्रणव का जप करते हुए भस्म धारण करें, मस्तक पर, हृदय, नाभि, गले अंशे बाहु संधिषु पृष्ठदेशे–इन स्थानों पर भस्म लगावें।

आचमन प्राणायाम

प्रणव का ३ वार उच्चारण करके आचमन करें और कम से कम आठ वार प्रणव द्वारा प्राणायाम करे। आठ वार प्रणवोच्चारण से पूरक और आठ वार या इससे अधिक कुम्भक प्राणायाम करें और रेचक भी आठ वार ही करें।

योग मार्ग में आठ और इससे अधिक (८० अस्सी का विधान हठयोग प्रदीपिका में है। विशेष साधक इससे भी अधिक कर सकते हैं। प्राणायाम को गतिवृद्धि कुम्भक में होनी चाहिए। (त्रिवारं आचमनम् द्विवारं मार्जनम् अष्टौ प्राणायामाः)

संख्या क्रम सूची

आगे संध्या की विधि के साथ मन्त्रपाठ आदि लिखे हैं, उनकी सूची यहां दी जाती है जिससे कर्म में पूरी सुविधा रहे।

(१) कुशासन पर बैठें।

(२) पहिले लिखे मन्त्रों से भस्मधारण करें।

(३) आचमन करें।

(४) प्राणायाम करें।

(५) 'भिक्षणं पटलंयत्र' 'मंगलाचरण।

(६) 'मं मंडुकायनमः' इत्यादि से भूत शुद्धि।

(७) पृथ्वी पर हाथ रखकर आसन का विनियोग हाथ में जल लेकर पढ़े।

(८) 'पृथ्वी त्वया धृता लोका' इससे भूतशुद्धि, 'अपसपतु ऐभूता' ४ मन्त्र पढ़े।

(९) प्राणप्रतिष्ठा हृदय पर दाहिना हाथ रखकर शरीर मिन्द्रि-याणयात्मा, मन्त्र पढ़े।

(१०) बन्दनम् हृदय में 'ब्रह्माद्यशेष गुरू पारपर्येन' ध्यान।

(११) फिर हृदय में 'फ्रणव' का ध्यान करें।

(१२) पुनः ६ बार प्राणायाम करें।

(१३) ततः प्रणव से कर शुद्धि कर 'प्रकोष्ठ' मणिबन्ध, कूर्पर, हस्तादि को ऊपर जल से धावें षडगन्यास।

(१४) 'ततोन्यासः भूरज्ञात्मनेनम' इत्यादि मन्त्रों से अंगुष्ठ हृदय आदि न्यास करें फिर उच्चस्वर से प्रणव का प्लुतोच्चारण करते हुए हृदय—शिर से लेकर पाद-अंगुष्ठ तक ३ बार न्यास करें।

(१५) ततः तालत्रययंकृत्वा बाणमुद्रा से ३ बार चुटकी बजाव।

(१६) बाद में प्रणव से दिग्बन्ध करें।

(१७) 'ओं हं हमितिवोजेनाकाश प्राकरं चिचिंत्य'—इत्यादि पांच मन्त्रों से पांचों तत्वों का चिन्तन करें।

(१८) तदन्तर कराग्र भाग को सिर पर रखकर परमाकाश का चिन्तन करते हुए हृदयस्थ ज्योति स्वरुप परमात्मा का ध्यान करें।

(१९) ओं नमो नारायेत्यष्ट बार जपेत्।

(२०) प्रणव विचारः विनियोग ततः स्तवनाम्। ओकार निरामैक वेद्य मनिशं' आदि ७ श्लोकों से तथा प्रणव बोधनार्थं माँडूक्योपनिषद पाठः।

(२१) तत. मानस पूजा प्रकारः 'ओं विष्णु भास्वत' आदि से प्रणवयुक्त पाठ पढ़े।

(२२) तब अष्टोक्तर शतं जप करते हुए तोन प्राणायाम करें और जल से अष्टदल कमल बनाकर अष्टाक्षर मंत्र लिखे।

(२३) हाथ के दोनों अंगुष्ठों से विष्णु का ध्यान करें—ओं आगच्छदेवदेवश' इस मंत्र द्वारा।

(२४) शंख चक्र, गदा, धेनु, गरुड़, मुद्रा बनावें, 'दिव्यात्मने किरीटायनमः' इससे नमस्कार करें। पंचोंपचार पूजन, ओं लं पृथ्वी गन्ध तंन्मात्र' इनसे गंध, पुष्प, धूप, दोप नैवेद्य की

मानसिक कल्पना करते हुए मानसिक पुष्पांजलि दें। 'ओं बभिरदमृत बीजेन' धेनुमुद्रा से अमृतरूप ध्यान कर तर्पण करें।

(२५) प्रणव से १२ बार जल अभिमंत्रित कर १०८ बार ऋषियों का तर्पण करें। 'ओं ऋषीस्तर्पयामि' १२ बार तथा अन्यों से भी बारह-बारह बार करने से १०८ होते हैं।

(२६) जल के तीन बार अर्घ्य प्रदान कर 'आत्मैवेदं सवम्' इत्यादि से दवताओं का विसर्जन (उत्तिष्ठोत्तिष्ठ)।

(२७) दक्षिण हाथ में जल लेकर प्रणव के १२ बार मत्रित कर बायें हाथ में लेकर सिर पर छोड़ें।

(२८) ३ बार आचमन ३ बार प्राणायाम।

(२९) दक्षिण हाथ में जल लेकर 'ॐ मनसा चिंतित यन्मे' इससे संकल्प करें।

(३०) प्रणव उच्चारण से दण्ड तर्पण करें। १२ बार दण्डमूल, १२ बार दण्डाग्रभाग, १२ मुद्रा मे ३ बार ग्रन्थियों में, मध्यभाग में दो २ बार मूल में जल से ६ लिखकर पैर पर जल छोड़े, अग्रभाग में सात लिखकर सिर में जल छोड़े।

(३१) 'अस्माकम् कुलेजाता, इससे पितरों का स्मरण तर्पण का विधान है। तब क्रम से सूर्य, दिक्पाल, गुरुदेव की वन्दना करें।

सन्यासी के लिए प्रणव जप २१ हजार ६०० प्रतिदिन आवश्यक है। 'यतेः कर्तव्य द्वयमेव—प्रणय जपः उपनिषद् चिन्तनम्।

संकल्प

(३२) अद्य सूर्योदयमारभ्य सूर्योदयपर्यंतं षट शताधिकेकविंशति सहस्त्र संख्यात्मकं अजपा मन्त्र जप करिष्ये।

समर्पण

पूर्वेद्युः अहोरात्रा चरितोच्छवास निश्चात्मकं षटशताधिकैक विंशति सहस्त्र संख्याकान् अजपा जपान मूलाधारस्य गणपतये षटशतानिसमर्पयामि, स्वाधिष्ठानस्थ ब्रह्मणे षट सहस्त्राणि समर्पयामि, मणिपूरस्थ विष्णवे षट सहस्त्राणि समर्पयामि, अनाहतस्थ रुद्राय षट सहस्त्राणि समर्पयामि, विशुद्ध चक्रस्थ जीवात्मने सहस्त्रं समर्पयामि, आज्ञाचक्रस्थ परमात्मने सहस्त्रं समर्पयामि, सहस्त्रारस्य गुरुवे सहस्त्रं समर्पयामि।

ऊपर के क्रम के जान लेने पर संध्या कर्म करने में सुगमता रहेगी। अब आगे यति संध्या लिखी जाती है।

।। इति यतिकर्म-परिचय ।।

—: o :—

यति-संध्या

तत्रादौ भस्मधारणाचमनप्राणायामाः ।।

द्वादशप्रणवाभिमन्त्रितभस्मधारणञ्ज।।

मंगलम्

भिक्षूणां पटलं यत्र विश्रान्तिमगमत्सदा ।। तत्रैवपदं ब्रह्मतत्वं ब्रह्ममात्रं करोतु माम् ।।१।। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ।।२।।

सच्चिदानन्दरुपाय कृष्णायाक्लिष्टाकारिणे ।।
नमोवेदान्तवेद्याय गुरुवे बुद्धिसाक्षिणे ।।३।।

भूशुद्धिः

ॐ मं मण्डुकायनमः ।। ॐ कं कालाग्निरुद्रायनमः ।। ॐ कुं कूर्मायनमः ।। ॐ आं आधारशक्त्यैनमः ।। ॐ अं अनन्तायनमः ।। ॐ प पृथिव्यै नमः ।। पृथिव्यामेरुतुष्टऋषिः कूर्मोदेवता सुतलं छन्दः आसने विनियोगः ।। पृथिवीत्वयाधृतालोका दैवित्वं विष्णुनाधृता । त्वञ्च धारयमाॅं देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।।१।।

भूतशुद्धिः

अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया। ।१।। अपक्रामन्तुभूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् सर्वेषामविरोधेन सन्ध्याकर्मसमारभे ।।२।। तीक्ष्णदष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम् ।। भैरवाय नमश्तुभ्यमनुज्ञाँ दातुमर्हसि ।।३।। शरीराकारभूतानां भूतानां यद्विशोधनम् ।। अव्यक्तभूतसंपर्कात्भूत शुद्धिरियंमता ।।४।।

प्राणप्रतिष्ठा

शरीरमिन्द्रियाण्यात्मा पञ्चभूतानि सूक्ष्मता। प्राणापानादिकं सर्वमहमेव चिदात्मकम् ।।१।।

नोट—अद्वैतवादी सन्यासियों का यह मत है कि उनके लिए भू शुद्धिः, भूतशुद्धि आवश्यक नही है ।

प्राण प्रतिष्ठा का सूत्र ऊपर आ चुका है । इस पांचभौतिक शरीर में ब्रह्म की प्रतिष्ठा या ब्रह्म का प्रकाश इस तरह समझना चाहिए कि दश इन्द्रिय, आत्मा (अन्तः करण), पंचतन्मात्रा (रूपतन्मात्रा, रसतन्मात्रा, गन्धतन्मात्रा स्पर्शतन्मात्रा, शब्दतन्मात्रा)

पंच प्राण–प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान जो उर्ध्वगति–वाला श्वासोच्छवास हैं यह प्राण कहा गया है । अधो-गतिवाला अपान, कण्ठ देश में रहने वाला उदान सर्व शरीर में जिसकी गति है वह व्यान है । नाभिप्रदेश में जिसकी गति है वह समान है यही चिदात्मा का स्वरूप है । इस प्रकार चैतन्य स्वरूप ब्रह्म की भावना संध्याकाल में करनी चाहिए ।

वन्दनम्

हृदये हस्तं निधाय ब्रह्माद्यशेषगुरुपारंपर्येण यावत्स्वगुरुपादाम्बुज तावत्प्रणौमीति शिरसि हस्त निधाय ।। ॐ नारायणाय नमः ।। ॐ पद्मभवाय नमः ।। ॐ वसिष्ठाय नमः ।। ॐ शक्त्ये नमः ।। ॐ पराशराय नमः ।। ॐ व्यासाय नमः ।। ॐ शुकाय नमः ।। गौडपादाचार्येभ्यो नमः ।। ॐ गोविन्द भगवत्पूज्यपादाचार्येभ्यो नमः ।। ॐ शङ्कराचार्येभ्यो नमः ।। ॐ विश्वरूपाचार्येभ्यो नमः।। पद्मपादाचार्येभ्यो नमः ।। ॐहस्तामलकाचार्येभ्यो नमः ।। ऊंत्रोटकाचार्येभ्यो नमः ।। ॐ समस्त ब्रह्मविद्यासम्प्रदाय–प्रवतकाचार्येभ्यो नमः।। ॐ ग गुरुभ्यो नमः ।। ॐ पं परमगुरूभ्यो नमः ।। ॐ पं ३ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः ।। ओं पं परात्परगुरूभ्यो नमः ।।

।। ॐ वामस्कन्धे गंगणपतयेनमः ।। ॐ दक्षिणस्कन्धे दं दुर्गायै नमः ।। ॐ वामकुक्षौ क्षं क्षेत्रपालाय नमः ।। ॐ दक्षिणकुक्षौ षं सरस्वत्यैनमः ।। ॐ पं परमात्मनेनमः नाभौ ।। ॐ परब्रह्मणेनमः हृदये ।

ततो हृदयकमलमध्ये सर्वतेजोमयं परब्रह्मस्वरुप प्रणवं ध्यात्वा हृदयमालभेत् ।। षट्प्राणायामान् कृत्वा प्रणवेन कर शुद्धि कुर्यात् ।। प्रकष्ठे मणिबन्धेचकुर्पयोर्हस्तयोस्तले ।। तष्पृष्ठेचतद्ग्रे च कर-शुद्धिरूदाहृता ।।१।।

न्यासाः

ॐ भूरज्ञानात्मने तुषारवर्णायाङ्, गुष्ठाभ्यां नमः ।। ॐ भुवः प्राजापत्यात्मनेरक्तवर्णाय तर्जनीभ्यां नमः ।। ॐ स्व सूर्यात्मने श्यामवर्णायमध्यमाभ्यां नमः ।। ॐ महः ब्रह्मात्मने नीलवर्णाया-नाभिकाभ्यांनमः ।। ओं जनः ज्ञानात्मने कृष्णवर्णाय कनिष्ठका-भ्यांनम. ।। ओं तपः सत्यामने श्वेतत्रर्णाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।। एवं हृदयादि ।। ततोप्लुतोच्चारेणप्रणवेन हृदयमारभ्य शिरः प्रभृति पादाङ, गुष्ठपर्यन्तं त्रिवारं व्यापकं कुर्यात् ।। तत-स्तालत्रयं कृत्वा बाणमुद्रया छोटिकात्रयञ्चविधाय प्रणवेन दिग-बंधं ॐ हंहमिति बीजेनाकाशप्राकारं विचिन्त्य वायुप्राकारं विचि-न्त्य रंरमित्यग्निप्राकारं विचिन्त्य वंवमितिजलप्राकारं विचिन्त्य लंलमिति पृथ्वी प्राकारं विचिन्त्य कराग्रं ब्रह्मरन्ध्रे निधाय परमाकाशं विचिन्तयेत् ।। स्फूरत्तारकसंकाशं विद्युतपुञ्ज-सम-प्रभम् ।। हृदिस्थं परमं ध्यायेदोमितिज्योतिरूपकम् ।।१।। ॐ नमो नारायणायेत्यष्टवारं जपेत् ।।

भावार्थः--न्यास छोड़ना, प्रणवोच्चारणम् । त्वरयैव एक-ग्रता साधकम् । अतः व्यापकँत्रिवारं कुर्यात् । प्रकाशमान् देदीप्यमान तारकों के समान, बिजली के समान कांति-वाला हृदयस्थ परमज्योति स्वरूपी ॐकार का ध्यान करें और अष्ठवार प्रणव सहित नारायण का जप करें । प्रणव बोधनार्थं माण्डूक्योपनिषदु पाठः ।

प्रणवविचारः

ॐप्रणवस्यान्तर्यामी ऋषि दैवो गायत्रोच्छन्दः परमात्मा देवता ज्ञातव्यगोत्रोत्पन्नो ब्रह्मपुत्रकः श्वेतवर्ण उदात्तस्वरः ज्ञानाग्निमुंखं ॐ अंबीज ॐ उ शक्ति ॐ म कीलकं मम मोक्षार्ये जपे विनियोगः ।। ॐ अकारस्याग्निर्ऋषिर्दैवोगाय-त्रीच्छन्दः ब्रह्मादेवता बलीं बीजं क्रियाशक्ति पीतोवर्णः जागृदव-वस्थाभूः स्थान-मुद त्तस्वरः ऋग्वेदोगाह्य पत्यो-ऽग्निः रजोगुणः प्रातःसवन विश्वात्मा पृथ्वीतत्व सृष्टि-क्रियाव्याप्त्यर्थे बिनियोग ।ॐउकारस्यवायुर्ऋषिस्त्रिष्टुपछन्दः विष्णुर्दैवता श्रीबोज ज्ञानशक्तिः विघुद्वर्णः स्वप्नावस्था भुवःस्थानमनुदात्तस्वरः यजुर्वेदो दक्षिणाग्निः सत्वगुणः माध्यन्दिनसवन तैजसआत्मान्तारेक्षतत्व स्थितिक्रियो-त्कर्षार्थे विनियोगः ।। ॐ मकारस्य सूर्यर्ऋषिजगती-च्छन्दः ईश्वरो देवता ह्रीं बोज द्रव्यशक्तिः श्वेतोवर्णः सुसुप्त्यवस्था स्वःस्थानं स्वरितःस्वरः सामवेदः आहवनीयोऽग्निः तमोगुणः सायंसवनं प्राज्ञात्मा द्यौस्तत्वं सहारक्रियार्थें विनियोगः ।।ॐ अर्धमात्रायाः वरुणर्ऋषिर्विराट छन्दः पुरुषो देवता क्षौ बोज विज्ञानशक्तिः सर्ववर्णाः तुरीयावस्था भूर्भुवः

स्व: स्थानानि उदात्तास्वरितस्वरा: अथर्ववेदोद्याना. दोवासंवर्तकोऽग्नि: सर्वे-गुणा: सर्वाणि सवनानि सर्वे आत्मान:पृथ्व्यंतरिक्ष'दवान्तत्वानि सृष्टिस्थितसंहारक्रियार्थे विनियोग: । ॐ ध्वनेर्ब्र ह्मषिरव्यक्तगायत्रीच्छन्द: परमानन्दो देवता हंसो बीज चिच्छक्ति: नाद: स्वरुप ब्रह्मात्मास्व:स्थान उन्मन्यवस्था मममोक्षार्थे जपे विनियोग:

स्तवनम्

ॐकारं निगमैक वेद्यमनिश वेदान्ततत्वास्पदं चोत्पत्ति-स्थितिनाशहेतुममलं सपूर्ण विस्बात्मकम् विश्वत्राणपरायणं श्रुति-शतै: संप्रोच्यमानं प्रभुं सत्य ज्ञानमनंतमूर्तिममलं शुद्धात्मकं त भजे ॥१॥ जगदङ कुरकन्दाय सच्चिदानन्द-मूर्तये गलिता खिलभेदायनम शान्ताय विष्णवे ॥२॥ यद्बोधादिदं भाति यद्बोधाद्विनिवतते ॥ नमस्तस्मै परानन्द-वपुषे परमात्मने ॥३॥ अविकाराय शुद्धाय-नित्याय परमात्मने ॥ नम: सदैकरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥४॥ यद्ज्ञानप्रभावेण दृश्यते सकलं जगत् । यद्ज्ञानच्छेय आप्नोति तस्मै ज्ञानात्मनेम: ॥५॥ अनात्मभते देहादावात्मबुद्धिस्तुदेहिनाम् ॥ सा विद्या तत्कृतो-बन्धस्तन्नाशोमोक्ष उच्चते ॥६॥ बन्धमोक्षौन विद्यते नित्यमुक्तस्य चात्मन: ॥७॥

उपरोक्त स्तवन के श्लोकों का भावार्थ यह है कि ओंकार स्वरूप शुद्ध बुद्ध वेदों द्वारा प्रतिपादित और संसार की उत्पत्ति स्थित, लय का कारण, सम्पूर्ण विश्व का रक्षण करने में समर्थ, वेदान्त तत्व का स्थान—ऐसा जो प्रभु

सत्यज्ञान अनन्त की मूर्ति है, उसका हम स्मरण करते हैं ।१

जगद्रूपी अंकुर के बीज, सच्चिदानन्द मूर्तिस्वरुप: जिसके अखिल भेद नष्ट हो गये—ऐसे शांतरूप बिष्णु को हम नमस्कार करते हैं ॥२॥

जो परमात्मा परमानन्द स्वरूप है, जिसके अज्ञान से यह जगत् भासता है और ज्ञान से नष्ट हो जाता है, उसको प्रणाम करते हैं ॥३॥

ओंकार रूपी जो बिष्णु सर्व समर्थ है, विकार रहित, शुद्ध, नित्यसर्वदा एक स्वरूप में रहने वाले परमात्मा को नमस्कार हैं ॥४॥

जिसके अज्ञान के सामर्थ्य से यह समस्त संसार दीखता है और उसके ज्ञान से ही ब्रह्म प्राप्ति होती है, ऐसे ज्ञानस्वरूपी ओंकार को नमस्कार है ॥५॥

अनात्म स्वरूपी देहेन्द्रियादि पदार्थो में देहाभिमानी पुरुषों का जो आत्मबुद्धि है, वही अविद्या है और अविद्या से जीव वन्धन में है । अविद्या के नाश से मोक्ष है । नित्यमुक्त आत्मा बन्धामोक्ष से रहित है ॥६॥

पंचीकरणम्

ॐ अथात: परमहंसानां समाधिविधि व्याख्यास्याम: ॥ सछब्द वाच्यमविद्याशबल ब्रह्म ब्रह्मणोऽव्ययक्तमव्यक्तान्म-हन्महं-तोंऽहं कारर-हङ्कारात्पतन्मात्रणि पचतन्मात्रे-भ्योऽखिलं जगत् । पंचानां भूतनामेकैकं द्विथा सम विभज्य स्वस्वाधभाग विहायकंतरेषु योजनात्पञ्चषापकृतेषु पंचोकरण भवति अध्यारी पापबादाभ्याँ निष्प्रपच प्रपंचयते ॥ तन्त्र

पंचीकृतपंचमहाभूतानि तत्कार्यञ्च सर्वं बिराडुच्यते ॥
एतस्त्थू--लशरोरमात्मनरिन्द्रियैरर्थो--पलब्धिर्जागरितं तदुभयाभिमान्यात्मा विश्वमेतत्रयमकार: अपं चीकृतपंच-महाभूतानि तत्कार्यञ्चसर्वं सप्तदशकं भौतिक लिंग हिरण्यगर्भ इत्युच्ते पंचप्राणा दशेन्द्रियाणि:मनो बुद्धिश्च ।
एतत्सूक्ष्मशरोरमात्मन:करणेषूपसंहृतेषु जागरितसंस्कारज प्रत्यय सविषय: स्वप्नस्दुभयाभिमान्यात्मा तैजस: एतत्रय-मुकार: शरोरद्वयकारण मात्माज्ञान साभासमव्याकृतमुच्यते एतत्कारण-शरीर मात्मनस्वच्चनसन्नासन्नापि सदसन्न-भिन्नं नाभिन्न नापि भिन्नाभिन्नं कुतञ्चिन्निरवयव सावयवं नोभयं किन्तु केवलं ब्रह्मात्मैकत्व ज्ञाना-पनोद्य सर्वप्रकारक्ज्ञानोपसंहारे बुद्धे: कारणात्मनावस्थान सुषुप्तिस्तदुभयाभिमान्यात्मा प्राज्ञ: एतत्रयं मकार: ॥ अकारमुकारें उकारं मकारे मकारोऽहमेवात्मा साक्षी केवल चिन्मात्र स्वरूपोऽहं नाज्ञानं तत्कार्यञ्च किन्तुनित्यशुद्ध-बुद्धमुक्तस्वभावं परमानन्दाद्वय परंब्रह्मौवाहमस्मि ॥ अहमेव परब्रह्मेत्य भेदेनावस्थानं समाधि: । ॐ प्रज्ञमं ब्रह्म अहंब्रह्मास्मि ॥ ॐ तत्वमसि ॥ ॐ अयमात्माब्रह्मेत्यादि महावाक्येभ्योनित्यश: प्रणवात्मस्थम त्मज्तोतिहृदिस्थित चैतन्यमात्रममृत सोहमस्मो तिभावयेत् ॥ तत्र कार्योपाधि-चैतन्यं जीवशब्दवाच्यम् ।कारणोपाधिचैतयमीश्वरपदवाच्यम उभयत्रचैतन्तमात्रं लक्ष्यम् । लक्ष्यपदार्थग्रहण सामर्थ्ये-नाखण्डकरसं ज्ञानभवति ॥ कार्यकारणे परित्याज्ययल्लक्ष्यं शुद्धं त द्ब्रह्मोच्यते ॥

कार्योपाधिरयं जीव: कारणोपाधिरीश्वर: ॥ कार्यकारणतां हित्वा पूर्णबोधोऽवशिष्यते ॥१॥ इति श्रुते: ॥

ऊपर पंचीकरण के सम्बन्ध में जो लिखा गया है, उसका स्पष्टार्थ नीचे लिखा जाता है । परमहंसों की समाधि–विधि इस प्रकार है—

छान्दोग्य उपनिषद् के षष्टाध्याय में 'सदेव सोम्येदमग्र–मासीदेकमेवाद्वितीय' । सृष्टि के प्रारम्भ में केवल सत्यस्वरूप ब्रह्म ही रहा । वह एक ही अद्वितीय रहा—'सच्छब्द वाच्यम विद्या शबलं ब्रह्म । आगे सृष्टि–समय में माया से मिश्रित हुए ब्रह्म से अव्यक्त हुआ, अव्यक्त से महतत्व, उससे बुद्धि (अहंकार) अहंकार से पंचतन्मात्रा और तन्मात्राओं से जगत की उत्पत्ति हुई ।

अव्यक्त की व्याख्या कठोपनिषद् शांकर भाष्य में इस प्रकार की है—

अव्यक्त सर्वरुप जगतो बीजरूपं अव्याकृत नाम रूप से तत्वं सर्वं कार्य–कारण–समाहार रूपं अव्याकृताकाशादि नामे बाच्यं परमात्मन्योतप्रोतभावेन समाश्रितं बटकणि कार्यामिव वटवृक्षशक्ति

महत: स्वरूपंकिं ? कठोपनिषद् शांकर भाष्ये:बुद्धे रात्मा सर्वंप्राणि बुद्धिनां प्रत्यागात्मभूतत्वादात्मा महान् सर्वं महत्वात् अव्यक्तायत्प्रथमं प्रथम जातं हिरणयगर्भ तत्वं बाधाबोधात्मक महानात्मा बुद्धे पर इत्युच्यते ।

भावार्थः—उस बुद्धि से भी, सम्पूर्ण प्राणियों की बुद्धि का प्रत्यागाप्मभूत होने से, आत्मा महान है क्योंकि वह सबसे बड़ा है, अर्थात अव्यक्त से सबसे पहले जो उत्पन्न हुआ हिरणयगर्भ तप्व है, जो महान, आत्मा (ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, सम्पन्न होने के कारण) बोधा बोधात्मक है, वह बुद्धि से भी पर है।

महत्तः परमव्यवतमव्यवतात्पुरूषः परः, पुरूषान्न पर किंचित साकाष्ठा सापरागतिः।

अहंकार से बुद्धि पंचतन्मात्रा, (रसतन्मात्रा, गधतन्मात्रा, रूपतन्मात्रा, स्पर्शतन्मात्रा) इन सूक्ष्मतन्मात्राओं से पंचभूतों की उत्पत्ति हुई, जैसे पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश।

पंचमहाभूतों का पंचीकरण

पंचीकरण के सम्बन्ध में वाद विवाद है। तैंत्तरोय उपनिषद् में पंच महाभूतों का वर्णन है। उसी से सृष्टि बताई गई है, किन्तु वहां पर पंचीकरण नहीं है छान्दोग्य उपनिषद् में तेज, जल, पृथ्वी—यह तीन बताए हैं। उनसे सृष्टि करने के लिए त्रिबृतकरण बताया है पंचीकरण नहीं। किन्तु और सब निबन्ध ग्रंथों में जो पचोकरण बताया है वह त्रिबृतकरण का उपलक्षण समझना चाहिए. क्योंकि त्रिबृतकरण पचीकरण के समान है।

द्विघा विधाय चैकैकं चतुर्धां प्रथमं पुनः। स्व स्वेतर द्वितीयाशयोर्जनात् पचपंचते ॥ (पंचदशी)।

पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश—इन पांचों महाभूतों का आधा-आधा भाग अलग रखना। दूसरा जो आधा भाग है उसके चार भाग करना और सब भुतों के आधे-आधे भाग में अष्टमास (दो दो आने) का भाग मिला देना—यह पंचीकरण हुआ। ब्रह्म सूत्र के इस सूत्र

में–'वैशेष्यात्त् तद वादस्तदवादः' इस सूत्र से जिस भूत का अधिक भाग है उसी का नाम पंचीकृत भूत को मिल गया।

पंचीकृत भूतों द्वारा सृष्टिक्रम आरम्भ हुआ है, वही विराट कहा जाता है। स्थूल शरीर,आत्मा, इन्द्रिय आदि का विश्व है। यह व्यष्टि के भेद हैं।

'एतत्स्थूल शरीरमात्मनरिन्द्रियैरर्थोपलब्धि जगारितं तदुभयाभिमान्यात्मा विश्वमेतत्रयमकारः।

अपंचीकृत पंचमहाभूत और उनका कार्य अर्थात् दश इन्द्रियां प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, मन, बुद्धि इस तरह १७ तत्व वाला भौतिक सूक्ष्म शरीर (लिंग शरीर) का अभिमानी हिण्यगभ (सूत्रात्मा) है। इसी प्रकार सूक्ष्म शरोर, आत्मा, इन्द्रिय, जागृत, के संस्कार प्रत्यय: (जीव) विषयों के साथ स्वप्न का अभिमाना तैजस है।

व्यष्टि के भेद-विश्व, तैजस, प्राण, जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति।

समष्टि के भेद–विराट, हिरण्यगभ, सूत्रात्मा। चतुर्थ तुरीय, अकार, उकार, मकार।

ॐकार प्रणव में संसार, ईश्वर, ब्रह्म, सबकुछ समाहित है, इसलिए वेदों में ॐकार का ही महत्व बताया है।

जोवात्मा का शरीर से वियोग ही मृत्यु है। स्थूल शरीर को भस्म या मृतिका में या जल में प्रवाहित करते हैं।

सूक्ष्म शरीर देहान्तर में जाता है, कारण शरीर अज्ञान, महाकारण व्रह्म में। अज्ञान सत् भी नहीः असत् भो नही, सत् असत् भी नहीं है।

सत् क्यों नहीं ? नाशवान है ? असत् क्यों नही ? कार्योत्पादक है, परस्पर विरोधी हैं। स्थूल का लय सूक्ष्म में, सूक्ष्म का

कारण मे, कारण का महाकारण में होता है। कार्य शरीर हैं। कारण इन्द्रिय हैं। जब दोनों नहीं रहते तब शुद्ध बुद्ध ब्रह्म ही शेष रहता है। यही ध्यान करना तथा जानना महात्माओं की समाधि है।

मानसपूजाप्रकार:

ॐ विष्णुं भास्वतकिरीटगंदवलययुगाकल्पहारोदराङ्घ्रि श्रोणीभूषं सुवक्षोमणिमकरमहाकुण्डलामण्डितागम्॥ हस्तोद्यच्छखक्रांबुजगदमगलं पीतकौशेयवासोविद्युद्भाभासमानं दिनकरसदृश पद्मसंथ नमामि॥१॥

हृदयकमलमध्ये दीपवद्वेदसारं प्रणवमयमतर्क्यं योगिभर्ध्यानगम्यम्॥ हरिगुरुशिवयोगं सर्वभूस्थमेकं सकृदपि मनसा यश्चिन्तयेत्स्यात्म मुक्तः॥२॥ देहेन्द्रियमनोबुद्धिप्रकृतिभ्यो विलक्षणम्॥ सच्चिदानन्दमद्वैत परं ब्रह्मास्मि केवलम्॥३॥ इति ध्यात्वा प्रणवयुक्तस्ववेदशाखान्तरगतानि महावाक्यानि पठेत्॥

ॐ तत्वमसि श्वेतकेतो ॐ सर्वं खल्विद ब्रह्मेति ॐ प्राणों ब्रह्म कंब्रह्म खं ब्रह्मेति ॐ योऽक्षिणि पुरुषा दृष्यते स आत्मेति॥ सुख हो वाचैतदभयमृतं ब्रह्मैतदिति ॐ तद्योऽहंसोऽसौ सोऽहमिति॥ ततोऽष्टोत्तरशतजपपूर्वकप्राणायामत्रयंकुर्यात॥ तदन्तरं जलमध्येष्टदलं प्रकृत्य तत्र ॐ नमो नारायणोयेत्यष्टाक्षर मंत्र लिखेत्॥ ततस्तन्मध्ये सपरिवार देवमादित्यमंडलात्स्वहृदयाद्वा हस्तद्वयाङ्गुष्ठाभ्यां प्रणवान्विनश्वासमार्गेण विष्णुमावाह्य तद्यथा॥ आगच्छ देवदेवेश शखचक्रगदाधर॥ गृहाणस्मत्कृतां पूजां चक्रेऽस्मिन्सन्निधोभव॥१॥ ततः शखचक्रगदाधेनुरुडमुद्राप्रदर्शनम्॥ दिव्यत्मने कीरीटायनम॥ सर्वात्मने पटबधायनमः॥ सावित्र्यात्मने तिलकायनमः॥ शब्दादिषयात्मने मकरकुण्डलायनमः॥ पुरूषामने कौस्तुभाय नमः॥ पञ्चभूतात्मने वनमालायनमः॥ दिगात्मने पीताम्बराय नमः॥ मनोवेगात्मने चक्रायनमः॥

अहंकारात्मने पाञ्चजन्यायनमः॥ आनन्दात्मने पद्माय-नमः॥ बुद्धितत्वात्मने कौमुदक्यैनमः॥ इति नमस्कृत्य॥

पंचोपचारपूजनम्

ॐ लं पृथ्वीगंधतन्मात्रप्रकृत्यानदात्मपरमेश्वराय गन्ध परिकल्पयामि॥ ॐ ह आकाशशब्दतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्म परमेश्वराय पुष्प परिकल्पयामि॥ ॐ यं वायुस्पर्शतन्मात्र प्रकृत्या नंदात्मपरमेश्वराय धुपं परिकल्पयामि॥ ॐ रं अग्निरूपतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मपरमेश्वराय दीपं परिकल्पयामि॥ ॐ वं अमृतरसतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मने परमेश्वराय नैवेद्यं परिकल्पयामि॥ ॐ सं शक्तिसर्वतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मने परमेश्वराय पुष्पांजलि परिकल्पयामि॥इति॥

तर्पणम्

ॐ वमित्यमृतबीजेन धेनुमुद्रया जलेऽमृतरूपं ध्यात्वा प्रणवेन द्वादशवारमभिमंत्र्याष्टोत्तरशतबारश्च तर्पयेत् ऋशींस्तर्पयामि॥ छन्दांसि तर्पयामि॥ देवतास्तर्पयामि॥ हृदयदेवं तर्पयामि॥ शरोदेव तर्पयामि॥ शिखादेव तर्पयामि। कवचदेवं तर्पयामि॥ नेत्रदेवं तर्पयामि॥ अस्त्रदेवं तर्पयामि

अर्घ्यप्रदानम्

ॐ आत्मैवेदंसर्वम्॥ ॐ ब्रह्मवेद सर्वम्॥ ॐ सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति त्रिवारमञ्जलि दद्यात॥

उत्तरपूजनम्

पूर्ववत्संपूज्य स्वहृदये सपरिवारदेवमुद्वासयेत् उत्तिष्ठोत्तिष्ठिदेवेश पुनरागयरामच॥ प्रसिद त्व महेशान प्रविश्य हृदये मम॥१॥ दक्षिणहस्ते जजमादाय प्रणवेन

द्वादशवारमभिमन्त्र्य वामकरे निक्षिप्य तद्गति तोदकेनशि-
र:संप्रोक्ष्य चाचम्य प्राणायामत्रयं कुर्यात् ।। जलमादायो संकल्प:
ॐ मनसा चिंचितं यन्मे वचसा भाषितं पुन: ।। कायेन कर्म सर्व
ब्रह्मार्पणं भवेदिति ।।१।।

प्रणवोच्चारेणदण्डतर्पणम्

द्वादश दण्डमूलेतु दण्डग्रेपि तथैवहि । मुद्रायां द्वादशं प्रोक्त
प्रतिपर्वत्रिधामतम् ।।१।। द्विधालोड्य च मध्येन मूले प्रोक्तं
नवाङ्कितम् ।। अग्रेसप्ताङ्कितं 'प्रोक्तमिति दण्डस्य तर्पणम ।।२।।
शिर: प्रोक्षणमग्रेण मूलेन पादप्रोक्षणम् । सुरास्तिष्ठान्त दण्डाग्रे
दण्डमुलेतु पूर्वजा: ।।३।। प्रतिग्रन्थितु गन्धर्वा मध्येतिष्टमान्तुनवा:
अस्माकं ये कुलेजाता नामगोत्रविवर्जिता: ।।४।। तेसर्वे तृप्तिमायांतु
दण्डसंबधिवारिणा ।।५।। वस्यस्मृत्येतिसमाप्य दिक्पाल गुर्वादीञ्च
प्रणमेत् ।। ततोभाष्यग्रथानां श्रवणविधिना श्रवणादिकञ्चकुर्यात्

तुरीय संध्या

ॐ अजपानामगायत्री योगिनां सिद्धिदामता । हंसपदं महेशानि
प्रत्यहं जपते नर: ।।१।। मोहाद्यो वैन जानाति मोक्षस्त-स्यनविद्यते
अंजपां जपतो नित्यं प्रनंजन्म न विद्यते ।।२।। हकारेणबहिर्यान्तं
विशन्तञ्च सकारत: । चिन्तयेत्परमेशानि जीवन्तं पक्षिरूपिणम्
।।३।। श्रीगुरो: कृपया: देवि ज्ञायते जप्यते यदा । उश्वास निश्वास
तथा बन्धोक्षस्तदा भवेत् ।।४।।

न्यासा:

ॐ हं सां सूर्यायांगुष्टाभ्यां नम: । हंसों सीमायतजं नीभ्यां
नम: । ॐ हंसें निराभासायानामिकभ्यां नम: । ॐ हंसौ
अतनुशूक्ष्मायकनिष्ठिकाभ्यॉनम: । ॐ हं स: अध्वक्तप्रबोधात्मने

करतलपृष्ठाभ्यां नम: ।। एवं हृदयादि ।।

ध्यानम्

ॐ अस्त हंसस्य देवेशि निगमागमागनपक्षकौ । उभावपि
चाग्निसोमौ वक्षो हंसशिरोभवेत् ।।१।। बिन्दुश्रयंशिखानेत्रमुखं
नाद: प्रकीर्तित: शिवशक्ति पदद्वन्द्वं कालाग्नि पाश्वयुग्मकम् ।।२।।
हंस परमहंसोऽयं सर्वव्यापी प्रकाशवान । सूर्य कोटि प्रकाशस्च
स्वप्रकाशेनभासते ।।३।। ततो यथाशक्ति हंसमंत्र पजप्य
समष्ठिच्यष्टिकमेण । ॐ हं स निरंजनाय मध्वमाभ्यां नम: ।।४।।

जपनिवेदनम्

ॐ गतारुणोदयादाराभ्यारुणादययेन्तं बहुश्वासानुसारकृतषट्-
शताधिकैकविंशतिसहस्त्रजपाजपेन गणेशब्रह्माविष्णुम हेशजीव-
परमात्मगुरव: प्रीयन्ताम् चतुर्दले मूलाधारे षड्शतेन साङ्गपाव-
रण: सायुध: स शक्तिक: सवाहन: श्रीगणेश: प्रियताम् । षड्दले
स्वाधिष्टाने सहस्त्रषट्केन० ब्रह्माप्रीयताम् । दशदले मणिपूरके
सहस्त्रषट्केन विष्णु: प्रीयताम् । द्वाद्शदलेऽनाहतचक्रे सहस्त्रषट्केन
महेश: प्रीयताम् । षोडशदले विशुद्धौ सहस्त्रेण जीवात्मा प्रीयताम्
द्विदलात्मकाज्ञाचक्रे सहेस्त्रण परमात्मा प्रीयताम् । सहस्त्रदले
ब्रह्मारन्ध्रो सहस्त्रेण० सत्गुरु: प्रीयताम् । गुह्यातिगुह्यगोप्त्र त्वं
गृहारमृस्मस्कृतजपम् । सिद्धिर्भवतुमेदेवि त्वत्प्रसादा-
न्महेश्वरि ।।१।।

त्रैलोक्यचैतन्यमयीश्वरेश्वरि: श्रीसुन्दारे त्वच्चरणाज्ञयैव ।
प्रात: समुत्थायतव प्रीयर्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ।।२।।

एवं सन्ध्योपासनं विधायान्ते स्वाधिकारानुरूपप्रणवजपं प्रकुर्वीत । तथा चोक्तम् । जपेद्द्वादशसाहस्त्रं प्रणवस्य प्रयत्नतः । सहस्त्र तु श्रवणार्थी योगाभ्यासीशतजपेत् ।।१ निर्विकल्पसमाधिस्तु न जपेत्किञ्जिदद्वयात् ।

जपनिवेदनमंत्रः

पुण्डरीकाक्षविश्वात्मन् मंत्रमूर्तेजनार्दन । गृहाणेमंजपं-नाथममदीनस्य शाश्वत ।।१।।

इति विश्वेश्वरसरस्वतिरूपविरचितयतिधर्मसग्रहे ।।

परिब्राज्यधर्मवन्तो यज्ज्ञानाद्ब्रह्मतांययुः । तद्ब्रह्मप्रणवै-कार्थतुर्यहरिं भजे ।।१।।

संकीर्णविषयाः

प्रातरूत्थाय वेदान्तस्त्रोत्रपठनपूर्वकं तीर्थादौ स्नात्वा-संध्यो पासनं प्रकुर्वीत ।

दण्डप्रकाराः

षड्भिः सुदर्शनं प्रोक्तं नारायणमथाष्टकैः । वासुदेवं द्वादशभिर्गोपालं कशभिस्यथा ।।१।। चतुर्दशभिश्चानन्तमत-ऊर्ध्वं न धारयेत षड्भिर्ग्रन्थिभिरित्यादिज्ञेयम् ।।

दण्डपतनग्रहणमन्त्राः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भगवन्नारायण जगत्पते । दण्डरूपिन् महाविष्णो प्रसीदपुरुषोत्तोम । भ्रातृषितृसमोदण्डो । भ्रातरोगुरवस्तथा । पथिसाधनहेतुश्च ब्रह्ममुद्रे नमोऽस्तुते ।।२।। विष्णुहस्ते यथा चक्रशूलं विशकरे यथा । इन्द्रहस्ते यथावज्रं तथादण्डो भवाद्यमे ।।३।।

नित्यग्रहणमन्त्रः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ देवेश देवानां हितकाम्यया । देवतारिवि-नाशाय सदा मम करे भव ।।१।।

स्थापनमन्त्रः

तिष्ठत्वं देवदेवेश तिष्ठत्वं दण्डदेवत । ऋषिभिर्मुनिभिश्चैव गन्धर्वैश्च समं सदा ।।१।।

कण्डलुशुद्ध्यादिकम्

यतेश्चत्वारि पात्राणि मृद्वेणुदार्वलाबुमयानि ।।

जलाग्निश्च कराग्निश्च महाग्निश्चैव संनिधौ । अनित्रय-प्रभावेण शुद्धोभव कमण्डलो ।।१ ।। कमण्डलो महातीर्थपुण्योद-कपरायण । अगस्त्यदि मुनिश्रेष्ठै धृतोऽसि त्वं कमण्डलो । स्नान-सन्ध्यादि कृत्येषु त्वमेकः साधनं मम ।।२।।

काषायकरणविधिः

तत्रादौ द्रवीकृतगैरिकमध्ये षडदलं विधाय तन्मन्ध्ये ॐ एं क्लीं हुं फट् इति षडाक्षरमन्त्रमुल्लिख्य । मेरुगर्भसमुदभूते गैरि-केवह्निरूपिणि त्वयां रंजित वस्त्रेण योगसिद्धि तु मे कुरु ।।१।।

यतिक्षौरविधिः

मासे मासे गृहस्थस्य पक्षे पक्षे च यज्वनाम् । ऋत्वन्ते-मस्करिणां यथेच्छ ब्रह्मारिणाम् ।।१।। यदा ह्याधिक मासःस्यात्त-दाक्षौरद्वयं भवेत् । मासद्वयेन प्रथमं मासेनैकेनचापरम् ।।२। मास त्रणंकंवाऋतुश्चैवतः भवेद्यतः एव क्षौरद्वयं कार्यभिति-शास्त्रस्यनिर्णयः ।।३।। त्रिमुहूर्ताधिका ग्राह्या पौर्णमासीप्रमाणतः कनिष्ठादि प्रकुर्वीतपर्वक्षौरं विचारतः ।।४।।

यतिमस्तके रक्तश्रावञ्चेद् द्विगुणप्राणायामाना कुर्यात् । मध्यं पुरीषादिकं चद्द्विगुण शौच माचरेत । तत्रादो कृतनित्य कम- परशुमुद्रा ।

ankurnagpal108@gmail.com

बन्धन पूर्वकं दिकपाल गुज्येष्ठादिवन्दन माचरेत् । क्षौरार्थं । प्रार्थयामि त्वद्यपर्वण्यहं प्रभो । अनुज्ञां देहि मां तात गमिष्यामि हितायवै ॥१॥

गुरुउवाच । गच्छ तात स्वकार्यार्थं सादरं भक्तिपूर्वकम् । तद्योगसिद्धि माप्नु हि तद्विष्णोः परमपदम् ॥१॥ इत्तपाददादि प्रक्षालनपूर्वकमाचनप्राणायामत्रयञ्च (कृत्वा प्रणवेन क्षीरभूमि संप्रक्ष्य तत्र पत्रावलि निधायाष्टादलं लिखेत् । ततोधनुमुद्राप्रदर्शनम् । नापितस्य हस्तौ द्वादशवारं प्रक्षालित्वा क्षौरोपयोगिशस्त्राणि संशोध्य सूर्याय दर्शयित्वा च पात्रो परिसस्थाप्य । स्वशिरं अग्रे कृत्वा । मेरुदण्डलतुल्यानि पातकानि महान्त्यपि । केशानाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मात्केशान्वताम्यहम ॥१॥ इति मंत्रेण स्वहस्तेन क्षीरसंस्कारमाचरेत् । दक्षिणवामभागे जलपूरिताम्रद्रोणान्निधाय तन्मध्यऽङ्गुलीदद्यात् मौनेनक्षौरम् । ततस्तीर्थगमनम् तत्र गतं विधाय केशादीन्तिक्षियत् । पश्चाज्जले द्वादशवारं निमज्य तीरमासाद्य नारिकेलसमं मृत्तिपण्डमादायाष्टाधा विभज्य प्रत्येकभाग मूलमण द्वादशवारमभिन्त्र्य सूर्याय दर्शयित्वा क्रमेण मृष्टिवभागेन हस्तपादमस्तकमुख बाहूकमण्डलुवासः कौपिनानि क्षालयेत् ॥ पुनश्च बिल्वमानपिडमादायभागत्रयं कृत्वा द्वययेन कक्षाद्वय विषाध्य शेषं विसृजेत् । पुनस्त्रिवारं जले निमज्य तीरमासाद्य षोडशगंडूशान्षोडशप्राणायामांश्च विधाय किञ्चित्प्रणवजसपूर्वकदण्डकमण्डलुसहित स्नात्वा धौते वाससी परिधाय माध्यह्निकं कृत्वा मठे गच्छेत । गुरुवन्दनम् । भो भो स्वामिन्दयासिन्धो प्रार्थयिष्यामि तेऽधुना । पर्वण्यादिनमस्कारे चानुज्ञां दातुमर्हसि ॥१॥ क्षौरकर्मतु यन्नयून परिपूर्णणम तदस्तु मे । आचारहीनाहं देव यथावच्छादि मां प्रभो ॥२॥ वङ्मनः कायसभूतानपराधान्यक्ष्यम्ब मे । सर्वेऽपराधाःक्षन्तव्याः शिक्षितव्य पुनः पुनः ॥३॥ अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽयभितिमो मत्वा क्षमस्व पुरूषोत्तम ॥४॥ गुरुरुवाच । सूखेन वर्ततां धर्मे चित्ते ब्रह्म विचिन्तय । इति क्षौरविधिः ॥

भिक्षाप्रकरणम्

मधुकरमसंक्लृप्तं प्रावप्रणोतमयाचितम् । तत्कालिकञ्चौपपन्नं भैक्ष पञ्चविधंस्मृतम् ॥१॥ नामगोत्रादिचरणं देशकालं श्रुतं कुलम् । शीलं बृतं वयः पूर्वख्यापयेन्नैव सद्यतिः ॥२॥ प्रवासी यदि संयासो रात्रौ भुजनन्नदुष्यति । दिवायदि न भुक्तं चेन्नाप्दोष. प्रकीर्तितः ॥३॥ ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां मेध्यानां भक्षमाचरेत् । द्विजाभावेतुसप्राप्ते उपवासत्रयेगते ॥४॥ फल शुद्रादपि ग्राह्यं प्राणं रक्षेत्सदायतिः । याशदुदरपूर्तिः स्यात्तावद्भक्षं समाचरेत् ॥५॥ पितुरब्दतुचाशौचतदर्धमातृपुत्रयोः । सपिडानान्तुसर्वेषां मासमेक विवजपेत् ॥६॥ मासत्रयंतुभार्यीया मासक्य पुत्र जन्मनि । चत्वारिशिद्दिनं त्याज्य कन्याजन्म हि यदगृहे महिषी गौश्वमार्जारी शुनीवाजा प्रसूतिका । दसरात्रं न गृह्णीयादभिक्षा तस्य गृहे यतिः ॥८॥ इष्टयन्नन्नैव भोक्तव्यं संस्काराम्न तथैव च भिक्षातत्रनकर्तव्या यत्रक्षौरविधिगृहे ॥६॥ वैश्वदेवस्य यः कर्ता तस्यभार्यां रसस्वला । तत्रभिक्षानतव्या भिक्षणा हितमिच्छता ॥१०॥ श्राद्धान्नैगृह्वोयाद्यादिभक्षणमागतम् । कुक्षौ स्थित यावदान्नं तावत्प्रे तत्वमानुप्यात् ॥११॥ अयने विषुवे चैव चन्द्रादित्योपरागयोः । मुक्त दृष्टवानभोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम् ॥१२॥ अर्धादये च सिंहस्थे कपिलाषष्टोपर्वणि । यतिभिश्वापिकर्तव्य मनशवाप्युषोषणं ॥१३॥ उपवासः प्रकर्तव्य क्षौर पर्वदिने तथा ॥

श्रेष्ठांमाधुकरमिति भिक्षां ताच्छिेच्चसदायतिः । मधुवदाहरणयतन्माधुकरमिति स्मृतम् ॥१७॥ गच्छेतसंकल्परहितान्गृहांस्त्रीन्पंचमप्तवा । संस्क्रत्य प्रभवेनाथ भिक्षापात्रयथाविधि ॥१७॥ यतिहस्ते जलदद्याद्भिक्षां दद्यात्पुनर्गलम् । तदन्नं मेरुता तुल्यं जज्जलं सागरोपमम् ॥१॥ यस्यगृहे यातभुङ्क्ति तस्यगृहे हरिः स्वयम् । यस्यगृहे हरिभुङ्क्ते तस्य गृहे जगत्त्रयम् ॥२॥ इति

मण्डलं पूतामंत्रौ भक्षानन्तरं पुराण श्रवणेनशेषंकर्ल नयेत् ॥ इति संक्षेपनिर्वाहः ॥

ॐ कं खं ब्रह्म

शाङ्करमठसंप्रदायोया: शान्तय:

श्री चिन्तामणि गणपतयेनमः विश्वेशं माधवं ढुढि दडपाणि च भैरवम् । वन्दे काशी गुहां गंगा भवानी मणिकर्णिकाम् ॥१॥

स्मृते शकल कल्याण भाजनं यत्र जायते । पुरुषष्तमज नित्यं बृजामि शरणं हरिम् ॥२॥

ॐ शन्नोमित्र: शंवरुणः । शन्नो भवत्वर्यमा । शन्नइन्द्रो वृहस्पतिः । शन्नोविष्णरुरुकमः नमोब्रह्मणे । नमस्तेवायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वमेवप्रत्यक्षं ब्रह्मवदिस्यामि । ऋतवदिस्यामि सस्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु । तद्वक्तार मवतु । अवतुमां । अतुवक्तारम् । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥१॥

ॐ सहनववतु । सहनौभुनक्तु । सहवीर्यंकरवाहै । तेजस्विनावधीतमस्तु। माविद्विषावहै । ॐ शांतिः शांति शांतिः ॥१२॥

ॐ यश्छन्दसामृषभो विश्वरुपः छन्दोभ्योऽध्यमृतात्संभूवसमेद्राधया स्पृणोतु । अमृतस्यदेव धारणो भूयासम् । शरीरं मेविचर्षणम् । जिन्ह्वामेमधुमत्तमा । कर्णाभ्या भूतिबिश्रुवम् । ब्रह्मणः कोशोऽसमेधया विहितः । श्रुतमेगोपाय । ॐ शांतिः शाँतिः शांतिः ॥३॥

ॐ अहं बृक्षस्यरेरिव । कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव । ऊध्वं पवित्रो वाजिनीव स्वमृतमस्मि । दविणं सवचंसम् । सुमेधा अमृतोक्षितः । इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम् । ॐ शांतिः शांतिः शाँतिः ॥४॥

ॐ पूणमदः पूणमिदंपूर्णात्पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णं मेवावशिस्यते ॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥५॥

ॐ आप्यापस्तुममाङ्गानिबाक् प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बल

मिन्द्रियाणि च सर्वाणि सर्वं ब्रह्मोपनिषद्म् माहं निराकुर्या मासा ब्रह्म निराकरोद निराकरणमस्त्वनिराकरणं मे अस्तु । तदात्मनि निरतेय उपनिषत्सु धर्मास्ते मयिसन्तुते मयि सन्तु ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥६॥

ॐ वाङमेमनसिप्रष्टितामनोमेवाचि प्रतिष्ठितमावीरावीमं एधिवेदश्यम आणीस्थः श्रुत मे माप्रहासीग्नेनाधोतेना होरात्रात्सदध म्यमृत बदिष्यामि । सत्य बदिष्यामि । तन्मामवतु-तद्वक्तारमवतु अवतुमामवतु वक्तारम् । ॐ शान्तिः शान्ति शान्ति ॥७॥

ॐ भद्रः नो अपिवातय नमः । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्ति ।८।

ॐ भद्रं कर्णेभः श्रृणुयामदेवाः भद्रं पश्येमाभियजत्राः । स्थिरेरंगैस्तुस्टर्वा सस्तनु भिव्यशेम तेवहितयदायु ।

स्वस्तिन इन्द्रो बृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तारक्षो अरष्टनोमः स्वस्तिनो वृहस्पिति दंधातु । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्ति ।।९॥

ॐ यो ब्रह्मणा विदधाति पूर्वयोवे वेदाँश्च प्रहिणीति तस्मै तंह देव मात्मबु द्धप्रकाश मुमुक्षुर्वे शरणहं प्रपद्ये । ॐ शान्तिः शान्तिः ।

ॐ नमो ब्रह्मादिभ्यौ ब्रह्मविद्या संप्रदायकर्त्तभ्यो वंशऋषिभ्यो मद्भ्यो नमोगुरूभ्यः । सर्वोपप्लवरहितः प्रज्ञान धनः प्रत्यगर्थो ब्रह्मैवाह्मिमस्ति ॥११॥

ॐनारायणं पद्मभवं वसिष्ठ शक्ति च तत्पुत्रपराशरं तत्‍चपराशरं च व्यासं शुक्रं गौडपद महान्तम् गोविन्दयोगिन्द्र मथास्य शिष्यम् ॥१॥

श्री शकराचार्यमथास्य पद्मापादं ए हस्तामलकं च । शिष्यम् तंत्रोटक वार्तिककारमन्यानस्मगुरूःसंतत मानतोऽस्मि ॥२॥

श्रुति स्मृति पुराणानामालयं बरुणालयम् । नमामि भगवत्पादं शकर लोकशंकरम् ॥३॥

शंकरं शंकराचार्यं केशवं बादरायणम् । सूत्र भाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥४॥

ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने । व्योमवद्व्याप्त-देहाय दक्षिणामूर्तये नमः ॥५॥

वेदान्तार्थविभासकाय गुरवे शान्ताय संन्यासिने नाना वादि नगेन्द्र संघ पवये योगिन्द्र वंद्यायच मोह ध्वान्तदिवाकराय भगवत्पादाभिधां विभ्रते तस्मै भाष्यकृते नमोस्तु सतत पूर्णाय बोधात्मने ॥६॥

अनध्याय मंगल शांतिः

अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभ संततिम् ।
स्मृति मात्रण यत्पुंसा ब्रह्मतन्मंगल परम् ॥१॥
अतिकल्याणरूपत्यान्नित्य कल्याण संश्रयात् ।
स्मर्तृणाम बरदत्वाच्च ब्रह्म तन्मङ्गललबिदुः ॥२॥
ॐ काश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्माणः पुरा ।
कठंभित्वा विनिर्यातौ तस्मान्मांगलिकारूणौ ॥३॥
ॐ अथ ॐ अथ तत्सत्परब्रह्मर्पणमस्तु ॥

सन्यास का महत्व

त्रिशत्तुरां त्रिसद्गांस्त्रिशच्च परतः परान् । सद्यः सन्यसनादेव नादेव नरकात्तारयेत्पितृन् ॥१॥ षष्टि कुलान्यतीतानि षष्टि-मागामिकानिच । नरकादुद्वरत्येव संन्यस्तोऽहमिति बुवन् ॥२॥ न सुखं देव राज्य न सुख चक्रपणिनः । याहशं वीतरागास मुनेरकति वासिन ॥३॥

डडात्मा का संयोग

दंडात्मनोस्तु सयोगः सवदैव विधीयते । न दडेन विनागच्छेत् दिषुक्षेपत्रंयबुधः ।

एक दन्ड़ा को आवश्यक कार्य

मौन योगासन योगास्तितिक्षैकांत शीलता निःस्पृहत्व समत्व च

सप्तैतान्येक दंडिनः । भिक्षाटन जापोध्यानं शौचं सुरार्चनं कर्तव्यानि षडेतानि यतिना नृपदडधत् । अयाचितं यथालाभ भोजनाच्छादनं भरेत्

निन्दा स्तुति और स्त्रियों के संसर्गका त्याग

न निन्दा न स्तुतिं कुर्यान्न कं चिन्मर्मणि स्पृशेद्न संभाषेत्त्रिय कांचित्पूर्वं द्दुष्टां न च स्मरेत् ।

संभाषणं सहस्त्रीभिरालाप प्रक्षण तथा नृत्य गान सभासैवा परिवादांश्च बर्जयेत् । किं विद्यया कितपस्या कित्यागेन श्रतेन वा किंविविक्तेत मौनेन स्वोभियस्य मनोहृतम् ।

यस्तु प्रव्रजितो भूत्वा पुनः सेवेत मैथुनम् । षष्टिवष सहस्त्राणि विष्ठायाँ जायतेक्रमिः ।

प्रत्येक संयासी के लिए स्त्रियों का ससर्ग त्याज्य है ।

ॐ ! ॐ ! ॐ !

कीर्तन

श्री राम जैराम जय जय राम ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे,
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥
हर हर महादेव शम्भो, काशी विश्वनाथ गगे ।
जय साम्ब सदा शिव साम्ब ।
हर हर मृत्यून्जय साम्ब ॥

(१)

शिव हर शंकर गौरोशं, बंदे गगा धरणीशं ।
शिवशम्भो, हरशम्भो । जय गौरो शंकर हर शम्भो ॥
महादेव शिवशकर शम्भो, उमाकान्त त्रिपुरारे ॥

मृत्युञ्जय वृषध्वज शूलिन गंगाधर मृड मदनारे ।
शिवशम्भो ! हरशम्भो जय गौरीशंकर हरशम्भो ॥
कृष्णानत मुकुन्द मुरारे, केशव माधव गोबिन्द ।
अच्युत केशव वामन विष्णु, लक्ष्मी नायक नरसिंह ।२।
जय नारायण ब्रह्म परायण, श्रीधर कमलाकांत ।
भक्तजनप्रिय पंकजलोचन नारायण भव मम शरणम् ।३।
नमोऽस्तुनेताय सहस्त्र मूर्तये सहस्त्रपादक्षिशिरोरूवाहवे ।
सहस्त्रानाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्त्रकोटि युगधरणे नमः ४
गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे ।
गोविन्द गोविन्न मुकुन्द कृष्णः ॥
कृष्णाय वासुदेवाम, हरये परमात्मने ।
प्रणत क्लेशनाशाय, गोविन्दाय नमोनमः ॥५॥
शिवेति मंगलं नाम यस्य नाम प्रवर्तते,
भष्मी भवन्ति तस्याशुः महापांक नाशयः ।
शिवेति परमात्मेति शकरेति हरेति च,
पार्वती प्राणनाथेति भज जिव्हे निरन्तरम् ॥६॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, तपोयज्ञ क्रियादिषु,
न्यून सम्पूर्णता याति सद्योवदे तमच्युतम् ।
अच्युतं केशवं रामनारायण कृष्ण दामोदरम् ।
वासुदेव हरिम् , श्रीधर माधव गोपिका वल्लभम् ।
जानकी नायक नायकं रामचन्द्रं भजेह ॥६॥
सर्वेऽत्र सुखिनः सतु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ।७।

पुस्तक मिलने का पता—

श्री श्री १०८ डंडी स्वामी शान्ता आश्रम जी महाराज
शान्तेश्वर मठ

अस्सीघाट, नं० बी/१/१५२ जे० ४ वाराणसी

तृतीय वृत्ति—१०००